वैदिकयुगीन दार्शनिक चिन्तन

*डॉ. शालिनी सक्सेना

सारांशः–

वेद विश्वभाषा के पुरातन ग्रन्थ हैं। वेद शब्द का अर्थ ही ज्ञान है। वैदिक विज्ञान सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर आत्मा, जगत्, जीवन, परमात्मा आदि आध्यात्मिक विषयों पर विस्तृत विवेचन करता है। वैदिक संहिताओं में भारतीय आस्तिक दर्शन के सूत्र प्राप्त होते हैं। आस्तिक दर्शनों की आधारशिला ही वेद हैं। वैदिक प्रमाण के द्वारा ही भारतीय दर्शन अपने सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं। वैदिक संहिताओं में विवेचित दार्शनिक वचारधार का प्रतिपादन ही आलेख का विषय है।

वेद सृष्टि विद्या के प्रतिपादक कहे जाते है। सृष्टि की रहस्यमयी प्रक्रिया की व्याख्या वेद की नाना विद्याओं के रूप में उपलब्ध होती है। अणोरणीयान् महतो महीयान् दोनो की एकता का दर्शन करने वाले ऋषियों ने कहा है कि इन दोनों का मूल कोई अनन्त, अव्यक्त अक्षर तत्त्व है। अणु, और महत् दोनों में उसी की महिमा अभिव्यक्त हो रही है, किन्तु स्वयं वह अव्ययपुरूष सहस्रात्मा या अनन्त है। विश्व विराट्, अनादि और अनन्त है। इसका स्रोत अविनाशी है। ऋषियों का विश्वास है कि इस व्यक्त विश्व का किसी अव्यक्त मूल स्रोत से उद्गम हुआ है। वह अव्यक्त मूल इस व्यक्त की सृष्टि करके इसमें अनुप्रविष्ट हो रहा है। ऋग्वेद मे यद्यपि शक्ति स्वरूप देव तत्त्व को अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है लेकिन उन सब नामों के मूल में एक ही देव प्रतिष्ठित है।

यो देवानां नामधा एक एवं तं सम्प्रशंन भुवाना यन्त्यन्या।

वहीं मूल देव तत्त्व प्रजापति नाम से अभिहित हुआ है। प्रजापति का जो अजायमान या विश्वातीत रूप है, उसे गर्भ, योगि, नभ्य प्रजापति, गुहा या पर्वत के समान कहा जाता है–

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते।

तस्य योनि परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन् ह तस्थुर्भवनानि विश्वा।।

वैदिक ऋषियों के अनुसार अनेक ब्रह्माण्डों का रचयिता प्रजापति एक है और वही इन सबमें समाया हुआ है।

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः परिरेक आसीत्।

दूर और निकट, अणु और महत्, भूत और भविष्यत् सर्वत्र उसी की सत्ता है। वही अखण्ड सूत्र समस्त सृष्टि में पिरोया हुआ है, जिसके कारण उसे अर्न्तयामी या सूत्रात्मा कहते है। अपने अजायमान रूप से सबसे भीतर प्रतिष्ठित रहकर वह एक अक्षर तत्त्व सबका नियमन करता है।

वैदिक दृष्टिकोण से सृष्टि के मूल में जिन दो तत्त्वों का योगदान है वह है– अग्नि व सोम। अग्निनषोमात्मकं जगत्।

अर्थात् यह जगत् अग्नि एवं सोम से व्याप्त है। अग्नि पर निरन्तर सोम की आहुति पड़ती है और उससे नयी अग्नि उत्पन्न होती रहती है। यही अग्नि प्रक्रिया समस्त पदार्थो में बराबर चल रही है। 'अप्सु सोमो अब्रवीत्' इत्यादि मंत्रों में स्थूल जल में सोम एवं अग्नि दो तत्त्वों की सत्ता बतायी गयी है, वंस्तुतः ये दो तत्त्व वर्तमान विज्ञान की शब्दावली में ऑक्सीजन और हाइड्रोजन कहे गए है। विज्ञान इलेक्ट्रॉन और प्रोट्रोन नामक दो मौलिक तत्त्वों को स्वीकार करता है। इनका जो स्वरूप बताया गया है वह शतपथ ब्राह्मण के सृष्टि की उत्पत्ति वर्णन में परिलक्षित है, जहाँ उसे यजुः, यत् व जूः शब्दों से निर्मित कहा गया है। जिसमें 'यत्' का अर्थ निरन्तरचलनशील या गतिमान् है और जू का अर्थ स्थिर।

यद्यपि सम्पूर्ण वेदराशि विज्ञानमय है किन्तु ऋग्वेद का दशम मण्डल सृष्टि–विज्ञान पर विशेष रूप से प्रकाश डालता है। इस मण्डल में वर्णित 'हिरण्यगर्भः पुरूष' एवं नासदीय सूक्त सृष्टि प्रक्रिया का दार्शनिक निरूपण करते है। नासदीय सूक्त में सृष्टि से पूर्व की अवस्था का विवेचन किया गया है जिसके अनुसार सृष्टि के प्रारम्भ मे कुछ नहीं था और तब केवल शून्य अवस्था थी। वह अविवित्त जल अंधकार से परिच्छन्न था। ऋग्वेद के दार्शनिक सूक्तों में अन्यतम नासदीय सूक्त ही भारतीय षड्दर्शन की भित्ति कहा गया है यह सूक्त वैज्ञानिक सृष्टि प्रक्रिया का उद्घाटक है। पौराणिक सर्ग वर्णन प्रक्रिया का आधार भी यही है। प्रो. वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार संसार के सारे मानव जाति ने जो चिन्तन किया उनमें सर्वोत्तम दार्शनिक विचार नासदीय सूक्त में है। सृष्टि उत्पत्ति से पूर्व की दशा का वर्णन करते हुए यह सूक्त सृष्टि की प्रारम्भिक अवस्था का विवेचन करता है। सृष्टि से पूर्व न सत् था, न असत् अर्थात् न तो चाक्षुष प्रत्यक्ष से, दृश्यमान जगत् ही था न ही उसका अभाव था। कार्य कारण अपनी सूक्ष्मावस्था में विद्यमान थे। यहाँ सत् एवं असत् के अभाव से तात्पर्य यह नहीं कि उसका अस्तित्व नहीं था, या विद्यमान नहीं था, वरन् यह अर्थ है कि विद्यमान तो था पर छिपा हुआ जल में निलीन था, जैसे मिट्टी में घट नहीं है परन्तु कार्यरूप में जब दिखाई दिया तो इसकी उत्पत्ति सिद्ध करती है कि वह घट उसमें विद्यमान था, तभी उत्पन्न हुआ। सृष्टि से पूर्वावस्था में कारण भी नहीं था, कार्य भी नही था, न लोक थे, न आकाश था, न उससे परे कुछ था न मृत्यु थी न अमरता ही थी। रात्रि एवं दिन का ज्ञान भी नहीं था क्योंकि लक्षणात्मक चिह्न भी नही थे। उस समय केवल एक ब्रह्य था जो प्राण से युक्त था किन्तु किसी भी प्रकार की अपनी क्रिया से शून्य था। ब्रह्य अपनी माया से अविभक्त एक रूप से युक्त था। उस माया सहित ब्रह्य से भिन्न कुछ नहीं था। उस समय एक आदि तत्त्व तपस् से उत्पन्न हुआ। उसके बाद मन का प्रथम बीज काम पैदा हुआ। यह सत् और असत् के मध्य की एक कड़ी थी। इस आविर्भाव से देवता हुआ। कवि असमजस में पड़ जाता है और सृष्टि के अगम एवं गूढ़ रहस्यों के सामने नतमस्तक होकर उसके अनिर्वचनीय रूप को स्वीकार करके मौन हो जाता है।

ऋग्वेद के ही प्रजापति सूक्त में आया है कि तदुपरान्त रात्रि, समुन्द्र एवं संवत्सर का आविर्भाव हुआ। धाता से यथापूर्व सूर्य, चन्द्र, द्युलोक, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और आकाश का निर्माण हुआ–

आपो ह यद् बृहतीर्विश्वमायन् गर्भ दधाना जनयन्तीरीग्निम्।

ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै .....।।

यह प्रजापति काम बीजरूप है। इनकी सृष्टि निर्माण वर्णनों में आरम्भ बिन्दु पुत्रेच्छुक स्त्रष्टा प्रजापति है, अथवा वह आदि सलिल (अप्) जिस पर मूर्त सुवर्ण अण्ड (हिरण्यगर्भ) तैर रहा था, जिससे कि उस जीवन का विकास हुआ, जो इच्छा का जनक ओर सृष्टि का रचयिता है। वह दिव्यकाम ईक्षण तत्त्व जैसी ही उभर कर सामने आया, वैसे ही उस ईक्षण तत्त्व रूप काम ने गति शून्य प्रकृति में हलचल उत्पन्न की। क्रान्त द्रष्टा ऋषियों ने कारणभूत प्रकृति की नित्यता तथा कार्य प्रकृति की प्रावाहित नित्यता के साम्यभाव को समझा। वह काम तत्त्व परमतत्त्व, जीव और प्रकृति इन त्रिविध रूपों में विभाजित हो गया उसकी कार्य रश्मियां तिरछी थी–

तिरश्चीनो.....परस्तात्।। *(ऋ. 10.129.5)*

वैज्ञानिकों के अनुसार बीस करोड़ वर्ष पूर्व सभी महाद्वीप परस्पर जुड़े थे और धरती के पृष्ट की वक्रता धरती के फैलने के कारण कम होती जा रही है। सत्तर करोड़ वर्ष पहले से लेकर वर्तमान समय तक धरती के फैलने की दर का ग्राफ बनाने पर एक सी वक्र रेखा उभरती है, जो बीस करोड़ वर्ष पहले सीधी रेखा में बढ़ना शुरू कर देती है। इससे स्पष्ट है कि प्रारम्भ में यह सृष्टि तिर्यक् उत्पन्न हुई क्योंकि सत्त्व–रज–तम तिर्यक् होकर ही सृष्टि रचना में समर्थ होते है, उनकी साम्यावस्था में सृष्टि सम्भव नही है। सृष्टि के नियामक मूल पुरूष, अव्यक्त है। छान्दोग्य उपनिषद् इसी पुरूष को उत्तम पुरूष कहता है। अग्नि चयन में आहित हिरण्यमय पुरूष इसी सौर पुरूष का प्रतीक है। मानव चेतना, काल चेतना तथा विश्व चेतना में तत्त्वरूप में पुरूष अवस्थित है, ऋग्वेद में ऋषि महदुक्थ में इसी का विचार करते है। 'पुरूष–सूक्त' उस परम पुरूष से सृष्टि–उत्पत्ति की प्रक्रिया का विवचेन करता है। यह जो चाक्षुष जगत् है, वह उस अव्यक्त पुरूष का अल्पांश है। अव्यक्त पुरूष का बहुल अंश द्युलोक में अविनाशी रूप में स्थित है (ऋ. 10.90.3)। पुरूष सूक्त में उस परमात्मा के सर्वव्यापक स्वरूप का विवेचन किया गया है–

पुरूष एवेदं सर्व यद् भूतं यउच भाउयम्।। (ऋ. 10.90.2)

ऋग्वेद में सूर्य को भी अजएकपाद कहा गया है यह सम्भवतः इसीलिए कहा गया है कि अबद्ध पुरूष का यह जगत् एक चरण है। सूर्य से ही यह सृष्टि गतिमती है। इस अबद्ध पुरूष का जो सृष्टि सर्जक एक अंश है वह इस संसार मे 'यथा पूर्व अकल्पयत्' इस मर्यादा के अनुसार अस्तित्व धारण करता है। उसी एक अंश से जड़ एवं चेतन विविध रूपों में व्याप्त हो गया है। पुरूष विविध रूपात्मिका सृष्टि के निराजत्व अर्थात् नानात्व के अधिकरण पर पुरूष विद्यमान है। वह बद्ध पुरूष उत्पन्न होकर दिव्य सृष्टि सर्जन के पश्चात् भूमि तथा प्राणी शरीरों को रचकर इनसे अतिरिक्त हो गया। सृष्टि यज्ञ के क्रम में सर्वप्रथम तीन ऋतुऐं उत्पन्न हूई। ब्राह्मण ग्रन्थों ने आज्य को प्राण ओर हवि को यज्ञ की आत्मा तथाा इध्म को अग्नि का प्रदीपक कहा है। अतः पुरूष सूक्त के इस मन्त्र में ऋतुओं के द्वारा सृष्टि की उत्पत्ति, विकास और परिपाक का वर्णन किया गया है।

उसी विराट पुरूष से ज्ञानरूप ब्राह्मण, बलरूप क्षत्रिय, राजरूप वैश्य एवं क्रियारूप शूद्र उत्पन्न हुए। उसी के मानस तत्तव से चन्द्रमा या सोमतत्त्व उत्पन्न हुआ।

पुरूष सूक्त के पन्द्रहवें मन्त्र मे पच्दश तत्त्वों का सूत्रित रूप प्राप्त होता है। उसी यज्ञ की सात गतियां एवं 21 समिधाऐ उत्पन्न होती है। यही त्रिसप्त यानि 3X7 क्रमशः प्रकृति, महत्, अहंकार, पंचतन्मात्र, पाँच स्थूलभूत, पाँच ज्ञानेन्द्रियां इस प्रकार 21 समिधाऐं मानी गई जो सांख्य के प्रमुख तत्त्व हैं।

इसी प्रकार वाक्सूक्त भी उसी सर्वव्यापी, अव्यय, अनादि परमतत्त्व का निरूपण करता है। वस्तुतः ऋग्वेद में भारतीय दर्शन के मूल तत्त्व सूत्र में चित्रित है, जिनकी विवेचना एवं व्याख्या पर सम्पूर्ण भारतीय दर्शन का विशाल महल खड़ा है। यह वैदिक मन्त्रों की अर्थप्रवणता एवं सारगर्भिता ही है कि परस्पर विरोधी विचारधारा वाले दार्शनिक अपने समर्थन के समान रूप से वैदिक उद्धारणांक को प्रस्तुत करते है।

***प्रोफेसर**
राजकीय महाराज आचार्य संस्कृत महाविद्यालय
जयपुर (राज.)